National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2026; 1(67): 128-130
© 2026 NJHSR
www.sanskritarticle.com

मनीषा
शोध छात्रा,
श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृत-विद्यापीठ, दिल्ली ११००१६

Correspondence:
मनीषा
शोध छात्रा,
श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृत-विद्यापीठ, दिल्ली ११००१६

न्यायदर्शन में लौकिक दृष्टि : एक समालोचनात्मक अध्ययन

मनीषा

शोधसार :-
भारतीय दर्शनशास्त्र आस्तिक और नास्तिक के भेद से मुख्यतः नौ भागो में दर्शन शाखा विभक्त हैं।ये आस्तिक और नास्तिक वेद की सत्ता के आधार पर बाटा गया हैं जो वेदों की सत्ता को स्वीकार करते है वे आस्तिक तथा जो वेदों की सत्ता को स्वीकार नहीं करते वे नास्तिक के अंतर्गत समाविष्ट होते हैं।इन्ही दर्शनों में एक दर्शन न्याय दर्शन हैं जिसके प्रवर्तक महिर्षि अक्षपाद गौतम मुनि हैं।इस शोधपत्र के माध्यम से न्याय दर्शन में लौकिक दृष्टि विषय पर विश्लेषणात्मक पद्दति से विवेचन किया जाएगा। न्याय दर्शन के षोडश पदार्थ और चार प्रमाण का ढाचा स्पष्ट करता है की बिना इस जगत के यथार्थ को समझे तथा बिना बौद्धिक ज्ञान के मनुष्य कल्याण या मोक्ष को प्राप्त नहीं कर सकता। इस शोध पत्र में न्याय दर्शन में वर्णित तत्व ज्ञान आप्त पुरुष की अवधारणा , वाद की पद्धति , लोकतान्त्रिक विमर्श और वैचारिक सहिष्णुता को तथा अपवर्ग की अवधारणा मानवीय दुखो के व्यावहारिक अंत को रेखांकित करती है । वर्तमान समय में नैतिक संकट , समाजिक विखंडन के सन्दर्भ में इस दर्शन की लौकिक दृष्टि अंत्यंत प्रासंगिक एवं अनुकरणीय सिद्ध होता है।

मुख्य बिन्दू :-
न्याय दर्शन , तत्वज्ञान , प्रमाणमीमांसा , निश्रेयस, तार्किक यथार्थवाद

भूमिका :-
प्राचीन न्याय के प्रवर्तक गौतम मुनि जो की अक्षपाद के नाम से भी जाने जाते हैं , ये न्याय सूत्र के रचयिता हैं । न्याय शब्द का सामान्य अर्थ है प्रमाणों द्वारा तत्वों का परिक्षण । यह प्रमुखतः तर्कशास्त्र और ज्ञान मीमांसा है । आचार्य कौटिल्य ने अपने ग्रन्थ " अर्थशास्त्र में आन्वीक्षकी को सभी विद्याओ का दीपक , सभी कर्मो का साधन और सभी धर्मो का आश्रय माना है ।

"प्रदीपःसर्वविद्यानामुपायःसर्वकर्मणाम ।
आश्रयः सर्वधर्माणाम विद्योदेशे प्रकीर्तिते ।।"[1]

सामान्यत: पाश्चात्यविद्वान और आलोचकों द्वारा यह तर्क दिया जाता है की भारतीय दर्शन का मुख्य उद्देश्य केवल पारलौकिक सुख , पुनर्जन्म से मुक्ति , और मोक्ष है जिसके कारण यह वर्तमान लौकिक जीवन , समाजिक कर्तव्यों और मानवीय मूल्यों की अवहेलना करता है । न्याय दर्शन एक यथार्थवादी (realistic) दर्शन है , पुर्णतः सत्य को स्वीकार करता है । इस शोध पत्र का मुख्य ध्येय न्याय दर्शन के व्यवहारिक और लौकिक आयामों को उजागर करना है । वर्तमान काल में प्रचलित अंधविश्वास स्वप्न भ्रान्ति को दूर कर किस प्रकार मानव को तार्किक दृष्टिकोण प्रदान करता हैं और कैसे इसके सिद्धान्त उच्च मानवीय मूल्यों की स्थापना करते हैं । इसका विस्तृत और समालोचनात्मक विवेचन इस पत्र में किया गया है ।

तार्किक यथार्थवाद :-
न्याय दर्शन में लौकिक दृष्टि मानव मूल्यों को समझने के लिए सर्वप्रथम इस दर्शन के ढाचे को समझना अनिवार्य हैं । जिससे हम विषय से सरलतापूर्वक भलीभाति अवगत हो सकेंगे । न्याय दर्शन यथार्थ की सत्ता का समर्थक हैं ।

यथार्थवाद वह दार्शनिक मत है जिसके अनुसार ज्ञाता से स्वतंत्र ज्ञेय का वास्तविक अस्तित्व होता हैं । अद्वैत वेदांत जहां इस दृश्यमान जगत को व्यावहारिक सत्ता मानता है और पारमार्थिक रूप से इसे माया या मिथ्या मानता हैं । अद्वैत आत्मतत्व अपनी माया या अविद्या शक्ति के कारण अनेकवत प्रतीत होता हैं । जो अजन्म या अजात है वह माया से ही अनेकरूपों में जायमान के समान प्रतीत होता है ।" अजायमानो बहुधा विजायते" (ब्र.उप .२.४.१९)[2]

"अजायमाना बहुधा माया जयते तु सः[3]"

वही न्याय दर्शन स्पष्ट रूप से उद्घोषणा करता है की यह भौतिक संसार , हमारी ज्ञान इन्द्रिय, शरीर, और बाह्य वस्तुए पुर्णतः वास्तविक है । उनका अस्तित्व हमारे मन पर निर्भर नहीं होता यदि संसार में कोई मनुष्य न भी रहे तब यह भौतिक जगत और इसके नियम यथावत बने रहते है ।

पदार्थो की अवधारणा :-

वस्तु की सत्ता जानने के लिए प्रमाण आदि की आवश्यकता होती हैं सत्त को ठीक सत्त जानना असत को असतत जानने का नाम हि तत्व हैं । जैसे किसी दृश्य पदार्थ को देखने के लिए दृष्टा दीपक लेकर अन्धकार में रखे पदार्थ को देखता है । उस प्रकाश के द्वारा जो पदार्थ रहता है वह दिख जाता है और यदि नहीं रहता तो नहीं दीखता है। यह वस्तु को प्रकाशित होना न होना उस पदार्थ की उपस्थिति का निश्चय होता है । यही पदार्थ न्यायशास्त्र में १६ प्रकार के बताएं गये हैं ।

"प्रमाणप्रमेयसंशयप्रयोजनदृष्टांतसिद्धांतावयवतर्कनिर्णयवादजल्पवितण्डाहेत्वाभासछलजातिनिग्रहस्थानानांतत्वज्ञान्निश्रेयसाधिगमः"[4]

प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टांत, सिद्धांत, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितंडा, हेत्वाभास, छल ,जाति, निग्रहस्थान ये सोलह पदार्थ है ये इह लौकिक विचार – विमर्श, तर्क – वितर्क और व्यावहारिक जीवन से सम्बंधित हैं ।

न्यायदर्शन की लौकिकदृष्टि :-

न्याय दर्शन की लौकिक दृष्टि समझने के लिए हमे न्याय के ज्ञान मीमांसा कार्य – कारण सिद्धांत को समझना होगा । कारण कार्य का पूर्ववृति और कार्य कारण का उत्तरवृत्ति होता है । किन्तु कारण कार्यभाव के लिए यह आननर्त्य नियत और निश्चित होना चाहिए ।

प्रमाणमीमांसा और लौकिकजीवन :-

इस दर्शन का मंतव्य है की लौकिक जीवन में सफलता ,सुख , दुःख इत्यादि सभी चीजे इन बातो पर निर्भर करता हैं की हमारा ज्ञान कितना प्रमाणिक हैं यदि हमारा ज्ञान भ्रमयुक्त होगा तो हमारे सारे व्यबहार असफल हो जायंगे, भ्रम युक्त ज्ञान से बचने के लिए हमे न्याय दर्शन के प्रमाण को समझना होगा प्रमाण शास्त्र के ज्ञान से हम सफल होसकते है ।महिर्षि अक्षपाद चार प्रमाण को स्वीकार करते है जो के इस प्रकार है- प्रत्यक्ष , अनुमान , उपमान , शब्द प्रमाण

"प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दा: प्रमाणानि"[5]

प्रति+अक्ष =प्रत्यक्ष , अक्ष इन्द्रिय है इन्द्रिय के संयोग विशेष से जो ज्ञान होता है उसे प्रत्यक्ष कहते है ।

अनुमान – अनुमीयते इति अनुमानं , अर्थार्त जो ज्ञान हमे पहले प्रत्यक्ष से होचुके है बाद में उसकी प्रत्यक्ष सत्ता न होने पर हम उस वास्तु का अनुमान क्र लेते है वह अनुमान प्रमाण कहलाता है यथा – यत्र यत्र धूमः तत्र तत्र वह्नि ।

उपमान – समान धर्म गुण मिलने पर दृष्टान्त सिद्ध होने पर उपमान होता है ।

शब्द – आप्तोप्देशः शब्दः , शब्द से जिसका ज्ञान होता है शब्द प्रमाण होता है ।

न्याय दर्शन के अनुसार, लौकिक प्रत्यक्ष के लिए इंद्रिय और विषय के बीच छह प्रकार के संबंध जिसे सन्निकर्ष कहते है इसे षडविधसन्निकर्ष के नाम से जाना जाता है , जो इस शोध का मुख्य तकनीकी हिस्सा हैं:

संयोग: इंद्रिय का वस्तु से सीधा संपर्क (जैसे - आँख का घड़े से मिलना) ।

संयुक्त-समवाय: वस्तु के गुण का प्रत्यक्ष (जैसे - घड़े के रूप/रंग को देखना) ।

संयुक्त-समवेत-समवाय: गुण के सामान्य धर्म का प्रत्यक्ष (जैसे - घड़े के रूप में 'रूपत्व' जाति को देखना) ।

समवाय: कान द्वारा शब्द को सुनना (चूंकि आकाश का गुण शब्द है और कान आकाश का हिस्सा माना गया है) ।

समवेत-समवाय: शब्द के भीतर 'शब्दत्व' (जाति) का प्रत्यक्ष करना ।

विशेषण-विशेष्य-भाव: अभाव का प्रत्यक्ष करना (जैसे - जमीन पर "घड़ा नहीं है" इसका ज्ञान होना)।

दुःख का व्यावाहारिक विश्लेषण :-

- न्याय संसार को दुःख स्वरुप मानता है ,लेकिन वह बौद्ध दर्शन की तरह नहीं मानता जो जिवन को निष्क्रिय बना दे , न्याय सूत्र में एक सूत्र के माध्यम से दुःख की व्युत्पति और उसकी समाप्ति के व्यावहारिक कर्म को समझाया है।

दुःखजन्मप्रवृत्तिदोषमिथ्याज्ञानानामुत्तरोत्तरापाये
तदनन्तराभावादपवर्ग :

"मिथ्याज्ञान, दोष, प्रवृत्ति, जन्म और दुःख — इनमें से बाद वाले (उत्तरोत्तर) के नष्ट होने पर, उसके ठीक पहले वाले का नाश हो जाता है; और इस प्रकार अंत में 'अपवर्ग' (मोक्ष) की प्राप्ति होती है।"

महर्षि गौतम ने दुखों के चक्र को उल्टे क्रम में समझाया है। यदि हम मोक्ष पाना चाहते हैं, तो हमें इस श्रृंखला को अंत (मिथ्याज्ञान) से काटना शुरू करना होगा। न्याय दर्शन के अनुसार मनुष्य संसार के चक्र में कैसे फँसता है और कैसे मुक्त होता है, इसे इन ५ चरणों से समझा जा सकता है:

[मिथ्याज्ञान] —> [दोष (राग/द्वेष)] —> [प्रवृत्ति (कर्म)] —> [जन्म] —> [दुःख]

१. मिथ्याज्ञान (False Knowledge)

यह पूरे संसार की जड़ है। जब मनुष्य आत्मा और अनात्मा, सही और गलत में भेद नहीं कर पाता, तो उसे 'मिथ्याज्ञान' कहते हैं। जैसे- शरीर नाशवान है, लेकिन उसे ही स्थायी मानकर बैठ जाना।

२. दोष (Defects)

जब मिथ्याज्ञान होता है, तो मन में **दोष** उत्पन्न होते हैं। न्याय के अनुसार दोष तीन हैं: **राग** (किसी वस्तु से अत्यधिक प्रेम), **द्वेष** (किसी से नफ़रत), और **मोह** (अज्ञान)। जब आप किसी चीज़ को गलत समझ लेते हैं, तो या तो आप उससे जुड़ना चाहते हैं (राग) या दूर भागना चाहते हैं (द्वेष)।

३. प्रवृत्ति (Action/Activity)

दोषों के वशीभूत होकर मनुष्य **प्रवृत्ति** (कर्म) करता है। राग के कारण वह अच्छे कर्म (पुण्य) करता है ताकि सुख मिले, और द्वेष या मोह के कारण बुरे कर्म (पाप) करता है। न्याय दर्शन के अनुसार, चाहे पुण्य हो या पाप, दोनों ही मनुष्य को कर्मों के जाल में बाँधते हैं।

४. जन्म (Rebirth)

जब मनुष्य कर्म (प्रवृत्ति) करता है, तो उन कर्मों का फल भोगने के लिए उसे बार-बार **जन्म** लेना पड़ता है। बिना शरीर के कर्मों का फल नहीं भोगा जा सकता।

५. दुःख (Suffering)

जहाँ जन्म होगा, वहाँ **दुःख** अवश्य होगा। बीमारी, बुढ़ापा, वियोग, और अंत में मृत्यु — यह सब जन्म के साथ ही आते हैं।

निष्कर्ष:-

- न्याय दर्शन की लौकिक दृष्टि केवल एक दार्शनिक सिद्धांत नहीं है, बल्कि यह आधुनिक मनोविज्ञान और वैज्ञानिक यथार्थवाद (Scientific Realism) के अत्यंत निकट है। छह प्रकार के सन्निकर्षों का सूक्ष्म वर्गीकरण यह दिखाता है कि प्राचीन भारतीय मनीषी मानवीय संज्ञान (Human Cognition) की प्रक्रिया से कितनी गहराई से परिचित थे। लौकिक जगत का सही और यथार्थ प्रत्यक्ष ही वह पहली सीढ़ी है, जिस पर पैर रखकर आत्मा अलौकिक प्रत्यक्ष (योगज दृष्टि) और अंततः अपवर्ग (मोक्ष) को प्राप्त करता है।

सहायक संदर्भ ग्रंथ

- न्यायदर्शनम् (वात्स्यायनभाष्यसहितं), ठाकुर उदयनारायण सिंह, चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान ।
- भारतीयदर्शन (आलोचन और अनुशीलन), चन्द्रधर शर्मा, मोतीलाल बनारसी दास।
- संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ उमा शंकर शर्मा ऋषि, चौखम्भा भारती अकादमी।
- भारतीय दर्शन, आचार्य बलदेव उपाध्याय ।
- भारतीय दर्शन की रुपरेखा , डॉ ऍम हिरियन्ना ।
- भाषापरिच्छेद एवं मुक्तावली ,विश्वनाथपंचानन ।

पाद टिप्पणी

[1] अर्थशास्त्र

[2] बृहदारण्यक उपनिषद

[3] अद्वैत वेदांत

[4] न्यायदर्शनम्(१.१.१)

[5] न्यायसूत्र (१.१.३)